241 क लेख – सेनापति का उम्र विवाद और संघ
241 ख प्रश्न– 2 श्री महेन्द्र नेह 80 प्रतापनगर दादाबाडी कोटा
241 ग प्रश्न– श्री के जी गोयल
241 घ प्रश्न– सूचना

सेनापति का उम्र विवाद और संघ

राष्ट्रीय स्वयं संघ ने सेना प्रमुख वी. के. सिंह की उम्र विवाद पर जनरल सिंह का पक्ष लेते हुए आरोप लगाया है कि जनरल सिंह की इमानदारी से परेशान भारत सरकार श्री सिंह के साथ अन्याय कर रही है। संघ के कथनानुसार सरकार श्री सिंह को बीच मे ही हटाकर अपने किसी खास चहेते को सेना प्रमुख के पद पर बिठाना चाहती है।

मै पिछले कई वर्षो से अनुभव करता रहॉ हूँ कि राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ का स्तर राजनैतिक दलो से भी ज्यादा नीचे जा रहा हैं । संघ भारतीय जनता पार्टी को सत्तासीन करने के लिये इतना मोह ग्रस्त हो गया है कि बिना उचित अनुचित का विचार किये हर मामले मे सरकार के खिलाफ टांग फंसाता रहता है। एक समय था जब संघ की इतनी विश्वसनीयता थी कि लोग संघ के विरूद्ध बोलने के पहले दस बार सोचते थे। संघ प्रमुख आम तौर पर संघ कार्यक्रम के बाहर बहुत कम बोलते थे और बोलते थे तो उसके एक एक शब्द के अर्थ निकाले जाते थे। आज उसी संघ को क्या हो गया है कि संघ तो गिडगिडाकर कह रहा है कि उसने आंदोलन अन्ना का पूरा पूरा साथ दिया है और अन्ना जी उल्टे यह कह रहे है कि हमारे आंदोलन का संघ नामक किसी संगठन से कोई संबंध नही। संघ अन्ना जी के आंदोलन के श्रेय मे भागीदारी बनने के लिये उससे गुहार लगा रहा है और अन्ना जी संघ को कोई श्रेय देने मे अपनी बदनामी समझ रहे हैं।

आजकल हर दूसरे तीसरे दिन भाजपा के राष्ट्रीय नेताओ के बयान आते हैं कि प्रधानमंत्री को इस मुद्दे पर त्यागपत्र दे देना चाहिये। त्यागपत्र के बयान इस तरह गाजर मूली की तरह आने लगे कि इन बयानो ने अपना प्रभाव ही खो दिया। यहॉ तक कि अब तो भाजपा कार्यकर्ता भी ऐसे त्यागपत्र के बयानो को महत्व नही देते। भारतीय जनता पार्टी की पार्टी के रूप मे तो विश्वसनीयता न सैद्धान्तिक रूप मे बची है न व्यावहारिक रूप में। भारतीय जनता पार्टी का सिद्धान्त क्या है यह आज तक कोई समझ नही पाया। न मुसलमानो के बारे मे कोई स्पष्ट नीति है न अमेरिका के विषय मे और न ही किसी आर्थिक मुद्दे पर। केवल एक ही नीति है कि सत्तारूढ दल के हर कदम का अंध विरोध और उसके हर कदम पर प्रधानमंत्री के त्यागपत्र की मांग। इस तरह कोई दल लम्बे समय तक नही चलता । यह तो गनीमत है रमणसिंह, नरेन्द्रमोदी, नीतिश कुमार, शिवराज सिंह चौहान जैसे मुख्यमंत्रियों की जिन्होने अपने अपने प्रदेशो मे अपनी व्यक्तिगत विश्वसनीयता खडी करके भाजपा की लाज बचा रखी है अन्यथा यदि ये भी दल के दलदल मे फंस जाते तो कुछ बचता ही नही। भाजपा का केन्द्रीय नेतृत्व चाहे जो भी बयानबाजी करे किन्तु ये प्रादेशिक लोग बहुत हद तक स्वयं को बचाकर रखने का ही प्रयास करते हैं।

जब भाजपा की सामाजिक विश्वसनीयता घटी तब संघ भी मैदान मे उतरा । संघ भाजपा को अपनी बी टीम मानता है तथा साथ साथ यह झुठ भी लगातार बोलता ह कि संघ का न भाजपा से कोई संबंध है न राजनीति से। संघ तो एक राष्ट्रवादी सांस्कृतिक संगठन है जो इन सीमाओ से आगे बढकर राजनीति मे दखल नही देता। पहले तो संघ की ऐसी झुठ का कुछ प्रभाव था भी किन्तु अब तो हालत यह है कि भारत का कोई भी व्यक्ति संघ क इस कथन पर विश्वास नही करता। एक समय था कि पण्डित नेहरू तक ने युद्ध काल मे संघ की भूमिका की प्रशंसा की थी तथा जय प्रकाश जी तक ने संघ को साम्प्रदायिक मानने से इन्कार कर दिया था। एक समय आज का है कि मेरे सरीखा साधारण व्यक्ति भी संध की प्रशंसा करने से कतराता है यहॉ तक कि यदि कोई अच्छा काम भी कर दे तब भी प्रतिक्रिया व्यक्त करने से सतर्कता रखनी पडती है क्योकि यदि कोई संगठन समाज मे झूठ बोलने के लिये मशहूर हो जाय तो उसके सत्य के पक्ष मे खडे होने मे भी अपनी विश्वसनीयता संकट मे पडना स्वाभाविक होता है।

संघ ने अभी अभी सेना प्रमुख वी के सिंह की उम्र विवाद मे अनावश्यक कूद कर अच्छा नही किया । मुझे तो लगता है कि संध ने बिना सोचे समझे ही सरकार के अन्ध विरोध की लाइन पर चलने वाली नीति का अनुशरण किया। जनरल वी के सिंह का उम्र विवाद है। जनरल का विवाद किसी भी रूप से न उनके मूल अधिकारो से जुडा है न ही किसी राष्ट्रीय नीति से, न किसी कार्यक्रम से। कोई व्यक्ति किस उम्र मे रिटायर हो यह व्यक्तिगत महत्व का प्रश्न है, राष्ट्रीय महत्व का नही। जनरल वी के सिंह जिस पद पर है उस पद से हटाने का प्रयास उनके किसी मौलिक अधिकार का हनन नहो। जनरल का पद कोई संवैधानिक पद भी नही है। वह पद तो मात्र कानूनी पद है जिसके निर्णय मे कानून अपना काम करेगा। यदि श्री वी के सिंह के प्रति सरकार पक्ष पात पूर्वक अन्याय करती है तो उसका

समाधान न्यायालय करेगा न कि समाज या कोई अन्य राजनैतिक दल । सेना और सरकार क बीच के संबंध बहुत संवेदनशील मुद्दा होता है । जनरल सिंह का पक्ष ठीक है या सरकार का यह तय करना मेरा विषय नही। मेरा तो आशय मात्र यही है कि इस मुद्दे को लेकर सेना के रिटायर्ड लोगो मे जैसी हलचल दिखी वैसी हलचल उचित नही थी। मामला किसी भी रूप मे सेना क किसी अधिकार से जुडा न होकर व्यक्तिगत था। ऐसे व्यक्तिगत मामलो मे गुण दोष को आधार न बनाकर अपने पराये के आधार पर संगठित होना खतरनाक लक्षण है खासकर सेना और सरकार के बीच तो ऐसा होना और भी ज्यादा खतरनाक है । मानलीजिये कि सरकार किसी बुरी नीयत से ही जनरल सिंह को एक वर्ष पूर्व हटाना चाहती है तो जनरल सिंह के लिये क्या उचित होगा? क्या जनरल सिंह के संघर्ष मे कोई त्याग भाव, भारतीय संस्कृति अथवा राष्ट्रवाद की गंध ज्यादा दिखी अथवा स्वार्थ पद लोलुपता या कानूनी दांवपेंच की । उचित तो यह होता कि जनरल सिंह अपना शेष बचा तीन माह का कार्य भी छोडकर कानूनी लडाई जारी रखते । इस कदम से उनकी अब तक की बनी इमानदारी की छवि को त्याग का समर्थन मिल जाता। जनरल सिंह ने पता नही क्यों यह राह पकडी? किन्तु संघ बेमतलब इस लडाई मे क्यो कूदा? जनरल सिंह इमानदार है यहां तक तो ठीक है किन्तु सरकार इनको हटाकर अपने किसी चहेते को बिठाना चाहती है ऐसा संघ का बयान बहुत खतरनाक है। जनरल सिंह का उम्र विवाद बहुत पुराना है । यदि सरकार की कोई ऐसी ही योजना होगी तो वह बहुत वर्ष पूर्व ही बनी होगी। इस बीच अटल जी की सरकार भी लम्बे समय तक रही । उस सरकार को कांग्रेस की इस योजना को ध्वस्त कर देने मे कोई दिक्कत नही थी । आज संघ इस प्रकार सेना और सरकार के बीच सेना की मदद को बहाना बनाकर सरकार के विरूद्ध जो आवाज उठा रहा है वह संघ की वर्तमान गिरती साख का ही विस्तार करेगा।

सर्वोच्च न्यायालय ने इस मामले मे हस्तक्षेप करके जो मार्ग निकाला वह बहुत ही उचित दिखा। अब पता नही संघ क्या तर्क रखेगा या चुप हो जायगा। यह तो अब संघ के सोचने का विषय है हमारा नही। यदि सर्वोच्च न्यायालय जनरल सिंह के पक्ष मे भी निर्णय देता तब भी मै मानता कि जनरल सिंह ने देश हित मे यह लडाई लडकर अच्छा नही किया है। अब निर्णय आ जाने के बाद तो मामला और साफ हो गया है।

मेरी तो संघ को सलाह है कि स्वतंत्रता के बाद संघ के भौतिक ढांचे मे यदि सौ गुने का विस्तार हुआ है तो सामाजिक विश्वसनीयता मे सौ गुने की गिरावाट भी आ गई है । अब भी समय है कि संघ विश्वसनीयता और भौतिक विस्तार के बीच लाभ हानि का आकलन करे तो अच्छा होगा। संगठन विस्तार और उच्च सामाजिक विश्वसनीयता को साथ साथ भी चलाया जा सकता है यदि अनावश्यक मामलों मे उथली टिप्पणियो का मोह छोड दिया जाय। मेरे विचार मे जनरल सिंह के मामले मे कूदकर संघ ने भूल की है जिससे बचा जाना चाहिये।

प्रश्नोत्तर

1.मृणालिनी जनसत्ता 31.01.2012

विचार–विद्वान लेखक मस्तराम जी कपूर ने जातिवाद का समर्थन करते हुए जनसत्ता छ जनवरी मे जो लेख लिखा उसमे न सिर्फ निष्कर्ष ही गलत निकाले गये बल्कि कई जगह सत्य छुपाया भी गया जो उनकी प्रतिष्ठा के अनुकूल नही था। उन्होने लिखा है ''हमारे यहा आरक्षण की योजना के तहत दलित आदिवासी और पिछडे तबको को जो लाभ सरकारी और गैर सरकारी क्षेत्रो मे मिल रहा है उसका अधिकांश भाग भी उन्ही बच्चो को मिलता है जिलनके मां बाप आरक्षण से लाभान्वित परिवारो से रहे हो। इनमे से जो योग्यता परिवारिक पृष्ठभूमि के कारण आ जाती है वह अन्य मे नही आ पाती। अगर आरक्षण का लाभ पा चुके बच्चो को आरक्षण की सुविधा से वंचित किया जाता है तो इसका मतलब होगा आरक्षित पदो के लिये योग्य उम्मीदवारों का अभाव जिसके चलते उन पदो को अनारक्षित घोषित कर उँची जातियो के हिस्से मे शामिल किया जा सकता है। इस प्रकार क्रीमी लेयर का सिद्धान्त आरक्षण व्यवस्था को ही खत्म करने का तिकडम बन जाता हैं''। जबकि सच्चाई इस कथन के ठीक विपरीत है। नई व्यवस्था मे आरक्षित पद को अब केवल आरक्षित व्यक्ति से भरा जा सकता है। अगर मैरिट मानदंडो को अंतिम स्तर तक कम करने के बावजूद आरक्षित श्रेणी के उम्मीदवार नही मिलते तो उन्हे अगले वर्ष की आरक्षित सीटो मे शामिल किया जाता है। सुप्रीम कोर्ट और संसद द्वारा स्वीकृत क्रीमी लयर सिद्धान्त को लेखक ने विचित्र और सवर्णो की तिकडम कहा है। दर असल क्रीमी लेयर का विचार आरक्षित वर्ग के बुद्धिजीवियों, नौकरशाहों और नेताओ ने मिलकर सरकार को सुझाया था। इसका कारण यह था कि बडे नगरो मे रहने वाले जो लोग सरकार की आरक्षण नीति के कारण पिछले पचास वर्षो मे विशेष पदो तक पहुंच चुके है, उनके बच्चो को यह लाभ उन्ही की जाति के गरीबों के हितो की खातिर रोक दिया जाना चाहिये। इस नीति मे यह कही भी नही प्रतिध्वनित होता है कि पंद्रह प्रतिशत , साढे सात प्रतिशत या सत्ताइस प्रतिशत से इन वगां का कोटा कम किया जायगा।

उद्देश्य सिर्फ इतना था कि बुंदेलखंड झारखंड असम या मणिपुर के सुदूर गांवो के उन गरीबो तक भी आरक्षण का लाभ पहुंच सके । क्या चाणक्यपुरी मे रहने वाले अमीरो के बच्चो के साथ प्रतियोगिता मे एटा समस्तीपुर सीतामढी

या त्रिपुरा के गरोब दलितों को तो छोडो दिल्ली की खिचडीपुर नंदनगरी बस्ती का रहने वाला दलित भी आगे आ सकता है?
हाल मे सुनील जैन और राजेश की एक महत्वपूर्ण किताब बिजनस स्टैडर्ड प्रकाशन से आई है, कास्ट इन डिफरेंट मोल्ड। इस पुस्तक मे ढेरो तथ्यो के साथ यह बताया गया है कि एस सी एसटी की आर्थिक स्थिति शिक्षा आदि पूरे देश मे न समान है और न केवल जाति पर निर्भर है। देश के अलग अलग हिस्सो मे उसके अनेक रूप है। बिहार और उत्तर प्रदेश के सवर्णो की वार्षिक आय कर्नाटक तमिलनाडु के दलित से भी कम होती हे । बिहार के गैर आरक्षित वग की औसतन प्रतिवर्ष आय जहॉ तिरालीस हजार रूपये है वही पंजाब के दलित की तिरसठ हजार और कर्नाटक के आदिवासी की बासठ हजार रूपये।
जाहिर है विभिन्न राज्यो मे जातियों की शैक्षिक और आर्थिक स्थिति मे फर्क है। राज्यो की आर्थिक स्थिति और सुव्यवस्था से भी गरीब दलितों का उत्थान जुडा हुआ है। जातियो की स्थिति मे सिर्फ क्षेत्रीय फर्क नही है। हर जाति के भीतर सम्पन्न और वंचित दोनो है और यह फर्क बढता जा रहा है। लिहाजा , सामाजिक न्याय के बारे मे सोचते समय भारतीय समाज मे आये इन बदलावो को ध्यान मे रखा जाना चाहिये। पिछडेपन का केवल जाति का पैमाना पर्याप्त नही है।

कितना बडा मजाक है कि गरीबी रेखा का मापदंड प्रतिव्यक्ति रोजाना पैतीस रूपये है, वहॉ क्रीमी लेयर के लिये इसे लगभग पचीस सौ या अट्ठाइस सौ रूपये प्रतिदिन का प्रस्ताव विचाराधीन है। क्या गरीबी रेखा से नीचे वाले दलित पिछडे सत्तर अस्सी गुना ज्यादा के आय वर्ग से मुकाबला कर सकते है? लेकिन सवर्णो का बोलना तिकडम माना जा सकता है। इसलिये स्वयं दलित पिछडे या उनके पैरवीकार सामने आकर अपनी ही जातियों के लिये रास्ता छोडे तभी इनका भला संभव है । क्रीमी लेयर के भाइयों को चाहिये कि जाति की मौजूदा स्थितियों को बनाये रखते हुए फिलहाल बराबरी की खातिर अपने ही जाति भाइयो को लाभ पहुचने दे।
एक भयंकर तथ्यात्मक गलती मस्तराम कपूर के लेख मे यह है कि "एससी एसटी ओबीसी उम्मीदवार को सामान्य श्रेणी के अंको मे परीक्षा पास करने के बावजूद आरक्षित कोटि मे डाल दिया जाता है, जिसके कारण आरक्षित श्रेणी के पद घट जाते है।"
यह कथन न नियमो से मेल खाता है, न संघ लोकसेवा आयोग, कर्मचारी चयन आयोग की प्रणालियों से । अब तो सूचनाधिकार के तहत संघ लोक सेवा आयोग जैस संस्थाओ से जानकारी मांगी जा सकती है या इंटरनेट पर जाकर उनकी वार्षिक गोपनीय रिर्पोट मे देख सकते है कि पिछले वर्षो मे कितने एससी एसटी कर्मचारी चुने गये और किसने किसका हक मारा।
नियम यह है कि अगर सामान्य श्रेणी के अंतिम उम्मीदवार के नंबर सौ मे से पचास आये हे तो पचास से उपर जो एससी एसटी और ओबीसी है , उन्हे मैरिट पर चुना माना जायगा। आरक्षित पदो के लिये पचास नंबर के नीचे मैरिट मे जाते है। इस प्रक्रिया मे सामान्य श्रेणी उम्मीदवार उसी अनुपात मे कम होते जाते है। संघ लोकसभा आयोग द्वारा आयोजित सिविल सेवा परीक्षा 2007 मे कुल छह सौ अडतीस उम्मीदवार चुने गये । इसमे जहॉ सामान्य श्रेणी के दो सौ छियासी थे वही आरक्षित तीन सौ बावन । 2008 मे चुने गये कुल सात सौ इक्यानवे मे सामान्य उम्मीदवारो की संख्या तीन सौ चौसठ थी और आरक्षित की चार सौ सत्ताइस
सुप्रिम कोर्ट द्वारा लगाई गई पचास प्रतिशत की सीमा के बावजूद दोनो बरसो मे लगभग पचपन प्रतिशत आरक्षण दिया गया । यानी 2007 मे छियासठ और 2008 मे तिरसठ अफसर अपने आरक्षित कोटे से ज्यादा लिये गये। यह इसलिये कि जो दलित ओबीसी उम्मीदवार सामाय श्रेणी मे पास कर लेते है उन्हे आरक्षण मे नही गिना जाता। आरक्षण उसके बाद शुरू होता है । कर्मचारी चयन आयोग से लेकर संघ लोकसेवा आयोग और राज्यो की सभी सेवाओ की परीक्षाओ मे भारत सरकार के कर्मिक विभाग के आदेशो के अनुसार ऐसा हो रहा है।

उत्तर– किसी भी लेखक की अलग अलग समय मे अलग अलग भूमिका स्वाभाविक है। किसी विषय पर तो लेखक स्वतंत्र तथा निष्पक्ष लेखन करता है तथा कुछ ऐसे भी विषय होते है जिनपर लेखक वकील की भूमिका मे खडा दिखता है । या तो लेखक किसी प्रतिबद्ध संगठन से जुडा हो सकता है अथवा लेखक की कुछ अन्य मजबूरियां भी हो सकती है । ऐसी स्थिति समझना कोई कठिन नही होता।
श्री मस्तराम जी कपूर कई विषयो पर स्वतंत्र लिखते है किन्तु जब जाति व्यवस्था की बात आती है तो वे अपनी सारी निष्पक्षता स्वतंत्रता को त्याग कर सवर्णो के विरूद्ध वकील की भूमिका मे खडे दिखते है । ऐसे मामले मे वे झूठ का भी सहारा ले सकते है । मैने कई बार देखा है कि जातीय जनगणना के पक्ष मे उन्होने पूरी शक्ति लगा दी थी। कई माह तक तो उनका यह हाल था कि वे जो भी लिखते थे उसमे बिना किसी संदर्भ के भी जातीय गणना का विषय जरूर घुसाते थे । छ जनवरी के जनसत्ता के लेख मे भी उन्होने एक लाइन जातीय जनगणना की अवश्य घुसा दी यद्यपि उसका कोई संदर्भ नही था।
जतीय आरक्षण कपूर जी का ऐसा विषय है कि वे इसके पक्ष मे सारी सीमाएँ तोड सकते है। कपूर जी हमेशा ही नब्बे प्रतिशत गरीब श्रमजीवी अवर्णो के विरूद्ध दस प्रतिशत बुद्धिजीवि अवर्णो की वकालत करते ह । वे आरक्षण को

एक अल्पकालिन समाधान न मानकर ऐसी शाश्वत व्यवस्था बनाना चाहते है जो उसी तरह हजारो वर्षो तक सवर्णो से बदला लेती रहे जिस तरह प्राचीन काल मे सवर्णो ने अवर्णो को दबाकर रखा था। उनका मानना है कि यदि क्रीमी लेयर फार्मूला लागू हुआ तो दस बीस वर्षो मे ही बडी संख्या मे हरिजन आदिवासी गरीब उसका लाभ उठाकर उन्नति कर सकते है तथा वैसी हालत मे आरक्षण रूपी शस्त्र को समाप्त भी किया जा सकता है। मेरे विचार मे मस्तराम जी को अपनी इस भावना पर दुबारा सोचना चाहिये और यदि वे न सोचें तो मृणालिनी जी सरीखे विद्वानो को उनकी बीमारी समझ कर माफ कर देना चाहिये। क्योकि जाति संबंधी मस्तराम जी का लेख अब भारत मे आम तौर पर लोग नही पढते । इसलिये प्रभाव पडने का कोई खतरा नही है। वे लिख लिख कर आत्म संतुष्ट होते रहे तो इससे समाज का कोई नुकसान नही होगा।

हमारे सभी समाज चिन्तक आरक्षण की अपेक्षा जाति व्यवस्था को कमजोर करने के पक्षधर थे किन्तु अम्बेडकर जी अवर्णो के साथ हुए सवर्णो के अत्याचारो का समाधान करने की अपेक्षा उसका राजनैतिक लाभ उठाने के लिये ज्यादा सक्रिय थे इसलिये अन्य लोगों ने दस वर्षो के लिये जातीय आरक्षण न चाहते हुए भी स्वीकार कर लिया। चूंकि नेहरू जी सवर्ण थे और किसी तरह भी प्रधानमंत्री बने रहना चाहते थे तथा प्रधानमंत्री बने रहने के लिये अवर्णो का समर्थन आवश्यक था इसलिये नेहरू जी ने न चाहते हुए भी आरक्षण की अवधि को बढाने जैसा संविधान विरोधी कदम उठा लिया। तबसे लेकर आज तक सवर्ण लोग प्रधानमंत्री बनने की तिकडम मे लगे रहे तथा अवर्णो को आरक्षण की अवधि बढाने का टुकडा फेकते रहे । सब जानते है कि आरक्षण का कोई लाभ न तो नब्बे प्रतिशत श्रम प्रधान अवर्णो को मिला है न ही मिलेगा क्योकि आरक्षण का पूरा लाभ तो दस प्रतिशत अवर्ण बुद्धिजीवियो के लिये ही रिर्जव है और उस लाभ के बदले मे ही वे सवर्ण नेताओ के उॅचे पदों का समर्थन करते रहते है । आपने देखा होगा कि ज्योंही मायावती जी उस दौड मे शामिल हुई त्योंही उन्होने सवर्ण नेताओ को सहलाना शरू कर दिया । इसी तरह तो सवर्ण नेता भी अवर्ण को सहलाना मजबूरी मानते रहे।

संविधान सशोधन का जो अधिकार संसद को संविधान मे दिया गया है उसकी मूल भावना उसे दिये गये दायित्वो मे आने वाली किसी तकनीकी बाधा को दूर करने तक सीमित था न कि संविधान मे स्पष्ट लिखी गई सीमाओं को बदलने तक । आरक्षण की सीमा दस वर्ष स्पष्ट लिखी थी तथा उसे किसी भी रूप मे बदलना संविधान के मूल ढाचे का उल्लंघन था । संविधान संशोधन करने वालो को कोई अधिकार नही था कि वे संविधान के मूल ढाचे मे मनमाना बदलाव करे। किन्तु वह किया गया तथा आज तक किया जा रहा है। अवर्ण श्रमजीवी बहुमत के विरूद्ध सवर्ण अवर्ण बुद्धिजीवियो के नापाक गठबंधन के खिलाफ अवर्ण श्रमजीवियो को आवाज उठानी चाहिये तथा सवर्णो को भी ऐसी आवाज का समर्थन करना चाहिये जो ऐसे नापाक गठबंधन के विरूद्ध है । चाहे मस्तराम जी कपूर सरीखे लोग कितना भी जोर क्यों न लगा लें किन्तु क्रीमी लेयर को आरक्षण से बाहर होना ही चाहिये। जब तक गाय की रोटी कुत्ता खाता रहेगा तब तक कभी गाय मजबूत नही हो सकती। कुत्ता मोटा हो रहा है तथा गुर्रा भी रहा है। कुत्ता गाय को लगातार समझा रहा ह कि गाय और कुत्ता एक ही जाति के है क्योकि दोनो की पशु है। ऐसे बहकावे से गाय को सतर्क करना हमारा उद्देश्य है।

2 श्री महेन्द्र नेह 80 प्रतापनगर दादाबाडी कोटा

प्रश्न—ज्ञान तत्व के अंक निरंतर मिल रहे हैं। आपकी लोक सापेक्षता और जन चिंतन सराहनीय है आप लुक पृष्ठ पर घोषित करते है कि सत्यता एवं निष्पक्षता का निर्भिक पाक्षिक जबकि सत्य तो निरपेक्ष नही सापेक्ष होता है। निष्पक्षता भी कैसे संभव है? जबकि तर्क वितर्क करते हुए किसी भी विषय पर आप अपना पक्ष प्रस्तुत करते हैं। मनुष्य समाज के प्रति आप निष्पक्ष या तठस्थ कैसे रह सकते है? या तो उसके हित यानी पक्ष मे होगे या फिर अहित यानी विपक्ष मे। अमीर गरीब शक्तिशाली निर्वल कार्पोरेट घराने के मालिको और जंगल मे जीवन बिताते आदिवासियो ,लुटेरे भेडियो और भेडो , व्याजखोरो और उत्पीडितो के सत्य और पक्ष अलग अलग है। आपको दोने म से एक का पक्ष तो चुनना ही होगा। आप मठाधीशो के साथ है या क्रान्तिकारियो के ? सत्ता व्यवस्था के साथ है या फिर आम जनगण के यह फैसला तो स्पष्ट रूप से आपको करना ही होगा।

आप कहेंगे कि ज्ञान तत्व को निरंतर पढने वाला पाठक आपसे इस तरह के प्रश्न आखिर क्यो कर रहा है? आपका पक्ष अधिकाशतः जन गण के साथ होता है लेकिन कभी कभी चूक भी हो जाती है, ऐसा मुझे लगता है । आप संघ परिवार की आलोचना करते है लेकिन नरेन्द्र मोदी की प्रशंसा। हिन्दुओ का पक्ष लेते प्रतीत होते है और मुसलमानो के प्रति भिन्न रूख? गोपालगढ की घटनाओ का आपका विश्लेषण भी कुछ इसी तरह का है यदि पी यु सी एल की जांच आपको एक पक्षीय लगती है तो आपने भी तो बिना किसी जांच के अपना नजरिया फेम कर लिया? आश्चर्य की बात है कि आप (1) संघ परिवार (2) साम्यवादी (3) मुसलमान, को तो वर्चस्ववादी मानते है लेकिन चुनी हुई सरकारो को बर्खास्त कर देने वाली तथा आपातकाल लागू करने वाली कांग्रेस को वर्चस्ववादी नही मानते ? क्या आप संयुक्त राष्ट्र संघ को रोद कर हमला करने वाले अमरीका व युरोप के देशो को भी वर्चस्ववादी नही मानते?

एम अंतिम बात यह कि आपने पृष्ठ 10 के द्वितीय पेज मे लिखा है कि समाजवाद, राष्टवाद, साम्यवाद आदि केन्द्रियकरण की दिशा मजबूत करने वाले शब्द है। मै समाज वाद और राष्टवाद के बारे मे आपसे कोई बहस नही करूगा। लेकिन साम्यवाद को लेकर मुझे आपके कथन पर गहरी आपत्ति है । कृप्या शब्दकोष पुनः देखने का कष्ट

करें तथा साम्यवाद के बारे मे इसके प्रवर्तक ऋषि कार्ल मार्क्स की अवधारणा को एक बार अवश्य पढने की तकलीफ उठाये। मेरे अपने अध्ययन के अनुसार साम्यवाद समाज की वह संभावित अवस्था है जिसमे समाज के सभी ऋणात्मक अंतविरोध समाप्त हो जायेगे तथा पूरा शिक्षित संवेदनशील मनुष्य समाज भौतिक नैतिक कलात्मक अंतिम उन्नतियो के शिखर पर आनंदमय होगा। उस समाज मे दमन करने वाली कोई राज्य सत्ता नही होगी। वह एक स्वयं अनुशासित प्रबंन्धित उर्ध्व गतिमय समाज होगा। जिससे वर्तमान मानवीय बुराइयां पूरी तरह विफल हो चुकी होगी। एक और सूचना महत्वपूर्ण रहेगी कि महात्मा गांधी भी इसी तरह राष्ट सत्ता विहीन समाज के समर्थक थे और वैसी ही चाहत रखते थे। अपने सोच की सीमाओ के साथ।
संवाद तो और भी करने थे लेकिन संवाद मात्र संवाद के लिये न होकर एक दूसरे को समझने गुनने सम्मान देने और सीखने के लिये होना चाहिये। तर्क करने का अर्थ मल्ल युद्ध कदापि नही है । यह तो भारतीय दर्शन की तत्व मीमांसा पद्धति है । जिसे सही परिपेक्ष्य मे विकसित किया जाना चाहिये।

उत्तर—व्यक्ति के झुकाव के दो आधार होते है (1) न्याय (2) अपनत्व । न्याय के पक्ष मे झुकना निष्पक्षता मानी जाती है तथा अपनत्व के पक्ष मे झुकना पक्षपात । न्याय और अपनत्व के बीच का चयन भी देश काल परिस्थिति तथा अपनी स्वयं की सीमाओ का आकलन करके ही संभव होता है । एक व्यक्ति की अपनी सीमा परिवार तक ही है । यदि परिवार तथा किसी अन्य के बीच कोई विवाद होता है तो परिवार की ओर झुकना उसकी मजबूरी है । इसी तरह किसी व्यक्ति की सीमाएँ उपर उठते उठते देश तक चली गई तो देश के पक्ष मे झुकना उसकी मजबूरी है । मैने अपनी सीमा देश से भी उपर उठकर सम्पूर्ण मानव समाज तक विस्तार कर लिया है। मेरे लिये उचित है कि मै अधिकतम सामाजिक न्याय का पक्ष लू। यदि मै सामाजिक न्याय के पक्ष मे झुका तो वह व्यवहार निश्पक्षता की श्रेणी मे माना जायगा। यदि मै न्याय को छोडकर अपनत्व की दिशा मे झुका तो वह पक्षपात माना जायगा। आपने अमीर गरीब शक्तिशाली निर्बल कारपोरेट घराने के मालिको और ग्रामीण आदिवासी व्याजखोरो और उत्पीडितो के बीच पक्ष विपक्ष की बात की है । मेरी नजर मे न्याय के समक्ष अमीर गरीब शक्तिशाली निर्बल कारपोरेट घराने के मालिक और ग्रामीण आदिवासी व्याजखोर और व्याज पीडितो के बीच कोई भेद न करते हुए न्याय का पक्ष मुझे लेना चाहिये चाहे वह न्याय निर्वल के विरूद्ध शक्तिशाली के ही पक्ष मे क्यो न झुका हो । आप साम्यवादी विचारो से प्रतिबद्ध है । आपका झुकाव न्याय की अपेक्षा कमजोर की तरफ झुका हो सकता है यह आपका अपनत्व भाव है न्याय नही। आपकी वैसी प्रतिबद्धता हो सकती है किन्तु मेरी नहीं। यही कारण है कि मै मठाधीशो और क्रान्ति कारियो के बीच भी किसी एक का पक्ष नही ले सकता।
मै न संघ विरोधी हूँ न मोदी प्रशंसक । सारे विश्व मे इस्लाम संगठन शक्ति के बल पर दारूल इस्लाम बनाने का प्रयत्न कर रहा है । संघ अपनी ना समझी के कारण बिना किसी योजना के इस्लाम को गाली दे देकर इस्लाम के विस्तार को रोकने की योजना मे बाधक बन रहा है। संघ की इस गलती का मै विरोधी हूँ । मोदी ने गुजरात मे जिस तरह इस्लाम की विस्तारवादी योजना की कमर तोड कर रख दी वह विषय अब तक विवादास्पद है। यदि दो साम्प्रदायिक ताकते समाज को गुलाम बनाकर रखने के उददेश्य से कट मरे तो मै क्यो उनके पक्ष विपक्ष मे बोलू । मैने गुजरात मे मुसलमानो पर हुए अमानवीय आक्रमण के लिये कभी मोदी की प्रशंसा नही की क्योकि वह साम्प्रदायिक शक्तियो का आपसी मामला है। किन्तु मोदी ने जिस तरह गुजरात मे सुशासन की राह दिखाई उसके लिये मोदी की प्रशंसा करना मै उचित मानता हूँ। गुजरात दंगो के विषय मे भी मै न मोदी विरोधी हूँ न प्रशंसक क्योकि वह उनका आपसी मामला है। गोपालगढ की घटनाओ पर पीयुसी एल ने भी जांच की और मैने भी । पी यू सी एल किन्ही विचारो के लिये प्रतिबद्ध लोगो का संगठन होने से उनकी जांच के निष्कर्ष पूर्व अनुमानित थे। मेरे निष्कर्ष यदि गलत है तो आप उन निष्कर्षो को चुनौती देते हुए लिखे तो उस पर आगे चर्चा संभव है। मै पी यु सी एल को चुनौती देता हूँ कि गोपालगढ मे मै और वे एक साथ आपके समक्ष चलकर जांच करे तो सत्य सामने आ जायगा । मै आपको ही निर्णायक मानने को तैयार हूँ यदि आप हम दोनो के साथ जांच कर सके । राजनैतिक स्वार्थ के लिये राजस्थान सरकार या उसके अफसरो को बलि का बकरा बना देना अलग बात है और न्याय की बात कुछ अलग है।
मै संघ परिवार इस्लाम और साम्यवाद का वर्चस्ववादी नही मानता । मै तो मात्र इतना ही मानता हूँ कि तीनों ही उग्रवादी विचारो के है अर्थात समाज मे हिंसा के समर्थक है। ये तीनो ही आतंकवादी नही है क्योकि इनके संगठित स्वरूप का प्रत्यक्ष हिंसा मे कोई हाथ नहीं होता । किन्तु तीनो के अतिवादी स्वरूप अभिनव भारत सिमी और नक्सलवाद की जडे संघ इस्लाम और साम्यवाद द्वारा ही सीच सीच कर सुरक्षित की गई । यह अलग बात है कि तीनो ही आतंकवाद के शिकार है तीनो ही आतंकवाद से पिंड छुडाना चाहते है किन्तु अब पिण्ड छुडाना आसान काम नही।
मै कभी कांग्रेस का प्रशंसक नही रहा । आपात्काल मे मै भी उठारह माह जेल मे रहा । मै कभी न नेहरू जी का प्रशंसक रहा था न इंदिरा जी का । मेरे विचार मे साम्यवाद संघ और इस्लाम की कोई विचारधारा है किन्तु कांग्रेस की तो कोई विचार धारा है ही नही । किसी तरह जोड तोडकर शासन मे बने रहना ही कांगेस का सिद्धान्त

रहा है। अब मनमोह सिंह ने कांग्रेस की परंपराओ को तोडने की पहल की है। मै मनमोहन सिंह का प्रशंसक हूँ और कांग्रेस पार्टी का विरोधी । मै तो मायावती, मुलायम जयललिता, की अपेक्षा भी काग्रेस के ज्यादा खिलाफ हूँ क्योकि कांग्रेस पार्टी ने जिस तरह परिवार वाद का वातावरण बनाया हुआ है वह बहुत ही घातक परंपरा है। अब तो बेटा बेटी नाती पोता के साथ साथ दामाद भी परिवार मे शामिल होने का प्रयत्न कर रहे है। प्रियंका और उनके पति की कोशिश के मद्दे नजर कांग्रेसियो को अपनी आत्मा से पूछना चाहिये कि क्या इसके बाद भी कांग्रेस कोई पार्टी के रूप मे बच जाती है?

आपने अमरीका और युरोप के विस्तार की चर्चा की किन्तु रूस द्वारा अफगानिस्तान तथा चीन द्वारा भारत पर आक्रमण की चर्चा नही की। सब पर एक साथ चर्चा करना अच्छा रहेगा।

कार्लमार्क्स ने जो कहा वह असफल सिद्धान्त था। मार्क्स की नोयत ठीक थी। यदि मार्क्स जीवित होते तो संभव है कि कुछ अलग होता। किन्तु मार्क्स यह भूल गये कि एक बार सत्ता तानाशाही का रूप ग्रहण करने के बाद स्वयं सत्ता का विकेन्द्रीकरण नही करती। मार्क्स के बाद जो लोग आये उन्होने मार्क्स की सोच के विपरीत ही काम किया। आज भी जो लोग साम्यवादी है वे मार्क्स के सत्ता विहीन समाज के असफल निष्कर्ष को ढाल मात्र बनाकर रखते है । वास्तविक उद्देश्य तो उनका सत्ता प्राप्त करना है। उनकी नजर तो लेनिन स्टालिन माओ की सफलता पर लगी रहती है और नाम मार्क्स का लेते रहते है । गांधी ने अपने जीवन काल मे अहिंसा का परिणाम दिखा दिया । इसलिये गांधी और मार्क्स की तुलना एक साथ ठीक नही।

अब साम्यवाद की चर्चा करना अनावश्यक है क्योकि साम्यवाद समाप्त हो चुका है और होना भी चाहिये। हम एक बार अधिकार सरकार को दें और बाद मे सरकार उन्हे हमे देकर शून्य हो जावे इतना करने की जरूरत ही क्या है? हम प्रारंभ से ही अधिकार इकठ्ठे न होने दे । अब तो रूस चीन भी साम्यवाद की विफलता मान चुके है , बंगाल केरल भी धीरे धीरे साम्यवाद के विचार मे सशोधन कर रहे है तथा मुझे विश्वास है कि आप भी नये ढंग से सोचेंगे ही । जब पश्चिम के अनेक देश राजतंत्र की तानाशाही से जकडे थे तब साम्यवाद को समर्थन मिला। साम्यवाद की जगह पर समाजवाद बढा । समाज वाद की जगह लोकतंत्र आया और लोकतंत्र की जगह लोकस्वराज्य आना चाहिये। समय चक्र को उल्टा चलाकर लोकतंत्र को समाजवाद , समाजवाद से साम्यवाद और साम्यवाद से राजतंत्र की दिशा मे ले जाने का प्रयत्न न तो उचित है न संभव । अच्छा हो कि आप लोकतंत्र के सशोधित स्वरूप लोक स्वराज्य की लाइन पर सोचना शुरू करें।

आपका पत्र कई माह पहले ही मिल गया था, किन्तु यात्रा के कारण उत्तर देने मे लम्बा अंतराल होना मेरी मजबूरी थी। अन्य अनेक पत्रो के उत्तर मे भी लम्बा विलम्ब हुआ है। इस कालखंड मे 'काश इंडिया डाट काम ' वेवसाइट भी निष्क्रिय रहा। अब दस फरवरी से काश इंडिया भी सक्रिय हो गया है।

3. श्री के जी बालकृष्ण पिल्ले तिरूअनन्तपुरम केरल

ज्ञान तत्व के 232 वे अंक मे आपने लिखा है कि रिटायर्ड आई ए एस आई पी एस को राजनीति मे आने से तत्काल रोका जाय।

मेरी धारणा यही है कि हमारे समाज मे जो अति बुद्धिमान और अति उत्साही है वही सिविल सर्विस परीक्षाओं मे उतीर्ण हो पाते हैं। सिविल सर्विस में रहते हुए प्रशासन व प्रबंधन के उच्च पदो पर रहकर काफी अमूल्य अनुभव प्राप्त करते है । ऐसे व्यक्तियो मे जो सच्चरित्र है। वे राजनीति मे आये तो देश का नेतृत्व आशिक्षित अल्प मति अनुभवहीन नेताओ की अपेक्षा अच्छी तरह कर सकेंगे।

उत्तर—सेवा निवृत्त शासकीय अधिकारियो को चुनाव लडने पर रोक संबंधी सुझाव मेरा न होकर श्री सरस्वतीनंदन मानव 108—162 तीधी देवी रोड शीशा मउ बाजार भारती साडी सेंटर कानपुर उत्तर प्रदेश का है। आप उनसे पूछ सकते है।

मेरा अपना विचार यह है कि चुनाव मे भारत के प्रत्येक व्यक्ति को चुनाव लडने की पूरी छूट होनी चाहिये । यहॉ तक कि पागल बालक या विदेशी को भी। अशिक्षित को भी। लोक की योग्यता पर तंत्र का कोई अंकुश ठीक नही । एक डाक्टर किसी व्यक्ति को पागल कह दे तो उस डाक्टर की बात समाज से उपर चुनाव के मामले मे लागू करना ठीक नही । लोक यदि मिलकर किसी विदेशी को अपना मैनेजर बनाना चाहता है तो आप उस विदेशी की अपेक्षा लोक का ज्यादा विश्वास क्यो नही ले लेते। श्यदि लोक को बालक पर विश्वास है तो होने दिजिये। लोक सर्वोपरि है, लोक योग्यतम है, उसे कोई सुपरसीड नही कर सकता चाहे वह कोई भी क्यो न हो। कोई भी सरकार व्यक्ति , व्यक्तियो या परिवारो की अपेक्षा तो कुछ मामलो मे उपर हो सकती है किन्तु वह लोक से उपर नही हो सकती न होनी चाहिये।

4. श्री किशोरी चौधरी इस्लामपुर नालंदा विहार

ज्ञान तत्व मे प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह की चर्चा विचार विमर्श प्रश्नोत्तर आदि का अध्ययन गंभीरता से पढता रहा हूँ । आपके इस विचार की प्रशंसा करूंगा जो उनके हटाने संबंधी बातो का खुलासा किये है कि नेहरू परिवार चाटुकारिता करने वाले नेता गण या कहे चंडाल चौकडी राहुल गांधी की ताजपोशी के लिये प्रयास रत रहे है ।

परन्तु फिर भी वे अपनी इमानदार छवि के वावजूद कई लीगल अनलीगल कार्यो को करते देख भी अपने टीम को कुछ नही कह रहे जिसका नतीजा सब जेल जाकर भुगत रहे है। यह पद तो इतना पावरफूल है कि यदि इंदिरा गांधी जैसे कडे कदम उठाने वाले व्यक्ति सबको ऐसी तैसी कर सकते है जो कांग्रेस को फाडकर सत्ता के बल पर बहुमत बनाए रखा था।

5 श्री एस के राय कोरबा

प्रश्न– मै ज्ञानतत्व पढता हॅू। कई विषयों पर आपके विचारो से सहमति भी बनती है । किन्तु आप जब मनमोहन सिंह की प्रशंसा करते है और प्रशंसा इतनी अधिक कि हमलोग संकट मे पड जाते है तब कष्ट होता है । मनमोहन सिंह जी ने भारतीय अर्थ व्यवस्था को जिस तरह पूंजीवाद की तरफ धकेल दिया है उसके बाद भी उनकी प्रशंसा का कोई आधार बचता है क्या?आप अपने इस विचार पर फिर से सोचिये । आपके सशोंधन की प्रतीक्षा रहेगी।

उत्तर– आज से करीब दो वर्ष पूर्व जब मनमोहन सिंह जी चारो ओर से अलग थलग पड गये थे तब मैने अकेले ही अपने मित्रो से अलग लाइन पकडकर मनमोहन सिंह जी की प्रशंसा की थी। यहॉ तक कि मैने सवतंत्रता के बाद भारत मे पहले लोकतांत्रिक प्रधानमंत्री के रूप मे मनमोहन सिंह को घोषित किया था। मेरे कई साथियो ने तो मुझसे अनेक प्रश्न किये तथा कई नाराज भी हुए । अब मै देख रहा हूॅ कि मेरे विचारो का समर्थन करने वालो की संख्या लगातार बढ रही है। मैने कुछ ही वर्षो मे देखा कि मनमोहन सिंह के कार्यकाल मे

(1) भारत को समाजवाद शब्द से मुक्ति मिल गई । पूर्व के वर्षो मे रूस चीन के पिछलग्गू के रूप मे भारत की गणना होती थी । अब भारत या तो स्वतंत्र माना जाता है या आंशिक रूप से अमेरिका की तरफ झुका हुआ। पहले भारत पूरी तरह इस्लामिक देशो का अन्ध पक्षधर था। अब भारत गुण दोष का आकलन करके समर्थन या विरोध करता है । पहले भारत के निकट पडोसी पाकिस्तान, बंगला देश, श्री लंका आदि भयभीत रहते थे। अब निकट के देशो से भाईचारा विकसित हो रहा है।

(2) मनमोहन सिंह के आने के बाद भारतीय अर्थ व्यवस्था सरकारी करण के चंगुल से निकलकर कुछ स्वतंत्र हो रही है । पुराने जमाने मे कर की दर बहुत ज्यादा होने से काला धन बहुत ज्यादा बनने लगा था । अब काला धन बन कम रहा है और उजागर ज्यादा हो रहा है। पहले भ्रष्टाचार होता था किन्तु दबा रह जाता था । अब भ्रष्टाचार उजागर हो रहा है।

(3) पहले पूरे भारत मे यह धारणा बनाई गई थी कि सिर्फ नेहरू परिवार ही देश चला सकता है। यदि नेहरू परिवार के अलावा कोई आया तो वह किसी न किसी तरह दौड से बाहर कर दिया गया । मनमोहन सिंह ने यह मिथक तोडी । यूपीए दो के दो वर्षो के कार्यकाल मे नेहरू परिवार के सदस्यो ने बहुत कोशिशे कर ली किन्तु अब तक मनमोहन सिंह को बदनाम नही कर पाये। नेहरू परिवार चौकडी के दिग्विजय सिंह जैसे सदस्यो ने महामंत्री पद पर रहकर भी जो कुछ किया वह सर्वविदित ही है । अब तो स्थिति मे बहुत सुधार आ चुका है यद्यपि अब भी राहुल गांधी के नाम की तिकडम खतम नही हुई है। अब तो प्रियंका भी मैदान मे आ चुकी है ।

(4) मनमोहन सिंह के कार्यकाल मे न्यायपालिका बहुत कुछ स्वतंत्र दिखने लगी। यहॉ तक कि न्यायपालिका कई बार अपनी सीमाए तोडकर भी अपनी सर्वोच्चता दिखाने का प्रयास करती है किन्तु मनमोहन सिंह अब तक ठीक से सम्हाले जा रहे है । इस तरह जिस न्यायपालिका को भ्रष्टाचार रोकने का श्रेय दिया जा रहा है उस सबका प्रारंभिक श्रेय मनमोहन सिंह का है जिन्होने स्वतंत्रता के बाद पहली बार न्यायपालिका तथा कार्यपालिक को बहुत स्वतंत्रता दी।

(5) मनमोहन सिंह जी ने कृत्रिम उर्जा की मूल्य वृद्धि के भी पूरे पूरे प्रयास किये । यहा तक कि उन्होने इसके लिये सरकार तक को खतरे मे डाल दिया था । यह मनमोहन सिंह की सूझ बूझ का परिणाम था कि बिजली उत्पादन वृद्धि को रोक कर रखने का ठेका ले चुके वामपंथी भी उनके कदम को रोक नही सके। दुनिया जानती है कि सभी वामपंथी खाडी के देशो की वकालत मे जी जान लगा देते है और प्रयास करते हे कि बिजली उत्पादन न बढे तथा डीजल पेट्रोल की मूल्य वृद्धि भी न हो।

(6) कैश सब्सीडी की दिशा मे सब प्रकार के विरोधो के बाद भी मनमोहन सिंह जी लगातार बढ रहे है।

(7) आधार पहचान पत्र योजना भी मनमोहन सिंह के कार्यकाल की एक अच्छी उपलब्धि मानी जायगी

(8) राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना भी मनमोहन सिंह के कार्यकाल की बडी उपलब्धि है यद्यपि यह कार्य यूपीए दो के पूर्व का है किन्तु है तो इन्ही के कार्यकाल मे।

मनमोहन सिंह की प्रशंसा से आपको कष्ट होने का कारण आपकी किसी विचारधारा विशेष से प्रतिबद्धता है। आप अमरीका तथा पूंजीवाद विरोधी गुट के सक्रिय सदस्यो मे से एक है । आप एन ए पी एम आजादी बचाओ आंदोलन स्वदेशी आंदोलन मेघा पाटकर आदि के साथ जुडकर सक्रिय है जबकि मै किसी गुट विशेष मे सक्रिय न होकर या तो लोक स्वराज्य की दिशा मे सक्रिय हूॅ अथवा विचार मंथन को अपनी अन्तिम सीमा मान रहा हूॅ । मेरा संपंर्क तो सबसे हे किन्तु प्रतिबद्धता किसो गुट के साथ नही है । इसलिये यह अंतर है। मै चाहता हूॅ कि इस विषय पर आप कुछ लिखे तो और उपयोगी विचार मंथन हो।

6. श्री के. जी. गोयल, भारतीय राष्ट्रवादी समानता पार्टी, जयपुर, राजस्थान

प्रश्न– इक्कीस नवंबर दो हजार ग्यारह को जयपुर में आपका पूरा भाषण सुनकर बहुत प्रभावित हुआ। विशेषकर प्रयोग क्षेत्र रामानुजगंज देखने की इच्छा जागृत हुई। आपने जो कुछ कहा उस संबंध में मेरे भी कुछ विचार हैं–

(1) शासन तथा चुनाव आयोग मिलकर राज्य सभा तथा गवर्नर के पद हटाने पर विचार करें। राज्य सभा की जगह उच्च सदन हो सकता है जो इस प्रकार गठित हो कि जीतने वाला उम्मीदवार लोक सभा में जाये तो, उसके बाद सर्वाधिक मत पाने वाला राज्य सभा या दूसरे सदन का सदस्य हो। विभागों का विभाजन भी इस प्रकार हो कि तीन चौथाई विभाग लोक सभा के नियंत्रण में रहे तो एक चौथाई राज्य सभा क। इसी तरह पूरे बजट का भी विभाजन दोनों के बीच किया जा सकता है।

(2) बड़ी–बड़ी कम्पनियों के सी. ओ. अथवा डाइरेक्टरों ने अपने–अपने वेतन कई गुना बढ़ा लिये हैं। कई जगह तो एक करोड़ रूपया प्रति माह तक। ऐसे उच्च वेतन एक लाख प्रतिमाह तक सीमित कर देना चाहिये।

(3) छठवें वेतन आयोग के आधार पर सरकारी कर्मचारियों के वेतन भत्ते भी बहुत ज्यादा बढ़ा दिये गये जिसके प्रभाव से आर्थिक विषमता बढ़ रही है। सरकार को ऐसी विसंगति भी दूर करनी चाहिये।

(4) सभी बैंकों के लिये अनिवार्य कर दिया जाय कि वे प्रतिवर्ष उन खाता धारकों के नाम सार्वजनिक करें जो एक करोड़ रूपया से ज्यादा के डिफाल्टर हैं।

(5) छोटे उद्योगों को बहुत कम ब्याज पर कर्ज देने की पहल करनी चाहिये।

(6) विदेशी निवेशकों के निवेश पर भी सतर्कता रखी जानी चाहिये जिससे डालर और रूपया के बीच संतुलन बना रहे।

आप इन मुद्दों पर ज्ञान तत्व में प्रकाश डालें।

उत्तर– आपने कुछ मुद्दे उठाये हैं। ज्ञान तत्व में उन्हीं मुद्दों पर विशेष चर्चा होती है जो या तो व्यवस्था परिवर्तन की दिशा देने वाले हों अथवा समाज में फैलाई जा रही असत्य धारणाओं के विरूद्ध बहस छेड़ने में सहायक हों। आपके सुझाव दोनों ही दिशाओं में उपयुक्त नहीं। ये मुद्दे वर्तमान राजनैतिक व्यवस्था में कुछ सुधार तक सीमित हैं। कल्पना करिये कि एक व्यक्ति की नीयत खराब है और वह मुझे पिंजरे में बन्द करना चाहता है। आप उसे वह राह बतायें कि उसे अपनी छः गलतियां सुधार लेनी चाहिये तो, उसका मार्ग और सुलभ हो जायेगा। ज्ञान तत्व की वह लाइन नहीं।

आपके सुझावों में से कोई ऐसा भी नहीं जो असत्य होते हुए भी समाज में सत्य के रूप में स्थापित किया जा रहा हो तथा जिस विषय पर एक सामाजिक बहस शुरू हो। ज्ञान तत्व सत्य के प्रचार के उद्देश्य से काम नहीं कर रहा। यह तो सिर्फ विचार–मंथन तक सीमित है। फिर भी आपके विचार हमने प्रकाशित कर दिये हैं। यदि कुछ पाठकों की विचार–मंथन में रूचि होगी और लिखेंगे तब चर्चा आगे बढ़ायी जायेगी।

श्री सुनिल द्वारा जनसत्ता बारह दिसंबर ग्यारह।

प्रश्न– कुछ माह पहले जब योजना आयोग के उपाध्यक्ष मोंटेक सिंह अहलूवालिया ने सर्वोच्च न्यायालय मे हलफनामा दिया कि शहरों मे बत्तीस रू0 और गांवो मे छब्बीस रू0 प्रतिदिन खर्च करने वालो को गरीबी रेखा से उपर माना जायगा तो देश के संभ्रांत पढे लिखे लोगो मे और मीडिया मे खलबली मच गइ । अहलूवालिया से लेकर जयराम रमेश तक को सफाई मे बयान देने पडे। उन्होने यह भी कहा कि हम इस पर पुनर्विचार कर रहे है। देश के ज्यादातर संभ्रान्त लोग यह सोचने को मजबूर हुए कि आज महगांई के जमाने मे एक इंसान छब्बीस या बत्तीस रूपये रोज मे अपना गुजारा कैसे चला सकता है? सरकार के इस बयान ने भारत के भद्रलोक की अंतरात्मा को कुछ झकझोरने का काम किया। इसके लिये उन्हे अहलूवालिया का आभारी होना चाहिये। पर सच तो यह है कि पिछले डेढ दो दशक से भारत सरकार द्वारा गरीबी रेखा का निर्धारण इसी क्रूर तरीके से किया जाता रहा है । असंगठित क्षेत्र के बारे मे बने अर्जुन सेनगुप्त आयोग ने यह बात कर सबको चौका दिया था कि देश की सतहत्तर प्रतिशत आबादी बीस रूपये रोज से कम पर गुजारा करती है , उस वर्ष के लिये सरकारी गरीबी रेखा ग्रामीण क्षेत्र मे मात्र बारह रूप्ये और शहरी क्षेत्र मे अठारह रूपय थी।

अगर औसतन पांच सदस्य का परिवार मान कर इन राशियो मे पांच का गुणा करे, तो पायेगे कि यह कोई असामान्य बात नही है। हमारे आस पास बडी संख्या मे लोग इसी रेखा के नीचे या आसपास है। इन दिनो प्राथमिक शालाओ मे जो पैरा शिक्षक लगाए जा रहे है उनके वेतन भी इतने ही है। सरकार द्वारा निर्धारित न्यूनतम मजदूरी की दरे भी इसी के आसपास या इससे कुछ ही बेहतर रहती है। बहुप्रचारित मनरेगा मे तो सरकार न्यूनतम मजदूरी भी देने को तैयार नही है, इसलिये उसकी मजदूरी मे एक परिवार के दो तीन सदस्य मजदूरी करते है और बच्चे को भी काम मे लगाया जाता है। इस गरीबी रेखा निर्धारण की बहुत आलोचना हो रही है। उत्सा पटनायक जैसे अर्थशास्त्रियो ने बताया है कि सत्तर के दशक मे गरीबी रेखा का पहली बार निर्धारण करते समय एक सामान्य भारतीय के लिये जितनी कैलोरी का भोजन जरूरी माना गया था अब गरीबी रेखा स्तर पर उससे काफी कम कैलोरी मिल रही है। यानी गरीबी रेखा अब भुखमरी की रेखा बन गई है । फिर भी हमारे शासक ऐसे चिकने घडे बन गये है कि उन

पर इन सच्चाइयों का कोई असर नही होता। ऐसी ही संवेदनहीनता सर्वोच्च न्यायालय मे पेश कियें गये हलफनामो मे दिखाई देती है।
इसका कारण साफ है । विश्व मे और अंतराष्टीय मुद्राकोष के निर्देशों पर हमारी सरकारे जिस वैश्वीकरण उदारीकरण की नीति पर चल रही है उसके तहत उन्हे बजट घाटा कम करना है । चूकि कंपनियों उधोगपतियों और निर्यातको को अनुदान तो वे कम नहो कर सकती। इसलिये जनकल्याणकारी कामो पर खर्च और अनुदान कम करने का भारी दबाव है । अर्थव्यवस्था मे सरकार का कम से कम दखल होना चाहिये और बाजार की ताकतों को अपना काम करने देना चाहिये यह आग्रह भी है। इसलिये सरकारी व्यवस्थाओ को धीरे धीरे खत्म करने उनका निजीकरण करने और गरीबो के लिये चलने वाली योजनाओ को लक्षित करने यानी थोडे से अति गरीब लोगो तक सीमित करने की प्रक्रिया 1991 के बाद से चल रही है। गरीबी रेखा से दो मकसद और पूरे होते है । यह सरकारो को अपनी जिम्मेदारी से बचने का मौका देती है । गरीबी को कम बात कर और असलियत को छिपा कर वैश्वीकरण नीतियों की सफलता भी बताई जाती है।
यह तो हो सकता है कि ज्यादा हो हल्ले और सर्वोच्च न्यायालय की फटकार के बाद भारत सरकार गरीबी रेखा को थोडा उपर खिसका दे। पर इससे समस्या हल नही होगी। यह सोचने की बात है कि जिस देश मे अस्सी पचासी प्रतिशत लोग बुनियादी जरूरते पूरी नही कर पा रहे हो वहा रेखा कहां खीची जायगी? ऐसी हालत मे गरीबी रेखा खीचने का मतलब बहुत से जरूरतमंदो को राशन शिक्षा इलाज और सामाजिक सुरक्षा से वंचित करना होग। इसलिय सस्ते राशन सस्ता पेयजल मुफ्त शिक्षा और मुफ्त इलाज की व्यवस्था बिना भेदभाव के पूरी आबादी के लिये होनी चाहिये। इसके लिये अगर सक्षम लोगो से कोई कीमत लेनी है तो वह उनकी हैसियत के मुताबिक उनसे ज्यादा कर के रूप मे ली जा सकती है। फिर भी अगर कुछ सेवाओ और सुविधाओ को पदान करने मे कोई भेद करना है तो बेहतर है कि गरीबी रेखा खीचने के बजाय अमीरी रेखा खीची जाय। यानी अमीर लोगों को चिन्हित किया जाय, और उन्हे इन सुविधाओ से बाहर रखा जाय। ऐसा करना प्रशासनिक रूप से भी ज्यादा आसान और व्यवहारिक होगा, क्योकि अमीरो की संख्या दस फीसदी से भी कम होगी। इसकी पहचान या मापदंड भी आसान होगे जैसे मोटरगाडी रखने वालों रेलगाडियो मे वातानुकूलित डिब्बेमे या हवाई जहाज से यात्रा करने वालो को अमीरो की सूची मे डाला जा सकता है । आयकर विभाग के पास देश के सारे अमीरो और मध्यम वर्ग की आय की अद्यतन जानकारी रहती है और वह कम्पयुटरीकृत भी है । इसलिये जो भी अमीरी रेखा बनाई जायगी उसके उपर के परिवारो की सूची हर साल आसानी से उपलब्ध हो जायगी। किस आय को अमीरी रेखा मानना है इसे तय करने की जिम्मेदारी विशेषज्ञो की उप समिति को दो जा सकती है । शर्त यही होनी चाहिये कि देश का कोई भी जरूरत मंद परिवार बुनियादी सुविधाओ से वंचित न रहे । महानगरो के खर्च को देखते हुए आयकर देने वाले नीचे के तबके को भी अमीरी रेखा से नीचे रखा जा सकता है।

उत्तर– मैंने पूर्व में कई बार लिखा है कि भारत की वर्तमान राजनैतिक व्यवस्था गरीबों, शरीफों, ग्रामीणों, श्रमजीवियों के विरूद्ध पूंजीपतियों अपराधियों, शहरी लोगों तथा बुद्धिजीवियों का मिला–जुला षड़यंत्र है। अपने कथन के समर्थन में मैंने गरीबी रेखा संबंधी हल्ले को आधार बनाकर एक लेख लिख था जो ज्ञान तत्व सहित अनेक पत्रिकाओं में प्रकाशित भी हुआ। मेरे विचारों के विरूद्ध अनेक विद्वानों ने लिखा जिन सबके विचार सुनिल जी के विचारों से ही मिलते जुलते रहे हैं।
सभी उत्तरों को पढ़कर मेरी यह धारणा पुष्ट हुई है कि मैंने जो लिखा वह सच है। बुद्धिजीवियां ने इस बहस का मोर्चा संभाला है। स्वाभाविक है कि सुनिल जी भी एक बुद्धिजीवी ही हैं जो संभव है कि गरीबी रेखा के वर्तमान मापदण्ड से बाहर हो जाते हों तथा उनकी अपनी प्रस्तावित रेखा के अन्दर आते हों। यही कारण दिखता है कि उन्होंने गरीबों ग्रामीणों श्रमजीवियों को गुमराह करने की कोशिश की है। उनके अनुसार गरीबी रेखा का मापदण्ड छब्बीस रूपया घोषित होते ही संभ्रान्त पढ़े–लिखे और मीडिया कर्मियों में खलबली मच गई। प्रश्न उठता है कि छब्बीस रूपया से उपर वालों में खलबली किनके लिये। ये भी मानते हैं कि भारत मं करीब बीस करोड़ की आबादी बारह रूपया से कम, बीस करोड़ आबादी बारह से अठारह के बीच, बीस करोड़ अठारह से छब्बीस के बीच तथा बीस करोड़ छब्बीस से पैंतीस रूपया के बीच रहती है। उनका तर्क है कि सरकार गरीबी रेखा की सुविधा पैंतीस रूपया तक को दे क्योंकि किसी व्यक्ति के सामान्य जीवन के लिये पैंतीस रूपया भी पर्याप्त नहीं है। मेरा मत इसके ठीक विपरीत है। मेरा मत है कि सरकार बारह रूपया से कम वालों को सुविधा लेने में पहली प्राथमिकता दे। यदि साधन ज्यादा हों तो अठारह तक ले ले। यदि साधन बहुत ज्यादा हों तब छब्बीस तक भी ले सकते हैं और यदि साधनों का बिल्कुल ही अभाव न हो तब सौ प्रतिशत को भी गरीब कह दें तो अच्छा ही होगा। सब कुछ गरीबी रेखा पर खर्च होने वाले साधनों पर निर्भर होगा। साधनों के साथ यह भी आंकलन करना होगा कि किस सीमा को पर्याप्त विकास माना जा सकता है। यह कैसे संभव है कि बारह से कम वाला भी वैसा ही गरीब जैसा छब्बीस से उपर वाला। यह तो अन्याय है। अधिकतम उपलब्ध साधन अठारह या छब्बीस तक की सीमा तक के विकास पर खर्च करने के बाद ही

छब्बीस उपर वालों को मांग उठानी चाहिये। तब तक ये प्रतीक्षा करें अन्यथा उनकी मांग गरीबों के विरूद्ध मानी जायेगी।

सुनिल जी मनरेगा की मजदूरी बढ़ाने की बात करते हैं। क्या उन्हें पता है कि गरीब किसानों जिनकी दैनिक आय छब्बीस रूपया से भी कम है उनके उत्पादन तथा उपयोग की वस्तुओं पर सरकार कितना टैक्स वसूलती है। सुनिल जी पहले यह आवाज क्यों नहीं लगाते कि छत्तीस या छब्बीस या अठारह रूपया से कम पर जीने वालों के किसी भी उत्पादन और उपयोग की वस्तु पर कोई कर नहीं लगेगा। हमारी सरकार स्वयं ऐसे षड़यंत्र कारियों के दबाव में रहती है तथा अब भी है इसलिये यह सरकार बेचारे गरीबों के उत्पादन और उपयोग को वस्तुओं पर और कर लगाकर गरीबी–रेखा संबंधी इनकी बात मान लेगी। सुनिल जी का यह कथन पर्याप्त नहीं होगा कि बारह रूपया से कम वाला उत्पादन और उपयोग पर भारी कर देता है यह उन्हें नहीं मालूम। अब तो मैंने पोल खोल कर रख दी है। अब तो ये पता करें।

उन्होंन किन्हीं उत्सा पटनायक जैसे अर्थशास्त्री का नाम लिखकर कहा है कि सत्तर के दशक में गरीबी रेखा के नीचे वालों को जितना कैलोरी भोजन मिलता था आज उससे कम प्राप्त होता है। मैं जानता हूँ कि समाज में बुद्धिजीवियों की एक चौकड़ी बनी हुई है जो आपस में ही एक–दूसरे को उपर उठाते रहते हैं। पटनायक जी सरीखे अर्थशास्त्री निरंतर सुनिल जी सरीखों को महान विचारक प्रमाणित करते रहेंगे तथा सुनिल जी पटनायक जी सरीखों को अर्थशास्त्री। मैं मानता हूँ कि ऐसे–ऐसे लोग ही मिलकर एक सरकारी मान्यता प्राप्त असत्य आंकडा भी प्रकाशित करते रहते हैं जिसके अनुसार तीस चालीस वर्षों में कैलोरी की उपयोगिता घटी है। सच्चाई यह है कि कैलोरी की उपलब्धता घटने की अपेक्षा कई गुना बढ़ी है तथा आवश्यकता घटी है। तीस–चालीस वर्ष पूर्व एक दिन की मजदूरी में जितना अनाज मिलता था, आज एक दिन की मजदूरी मं औसत चार–पॉच गुना ज्यादा अनाज मिलता है। स्वयं सिद्ध है कि कैलोरी की उपलब्धता बढ़ी है। दूसरी ओर यह भी प्रमाणित है कि श्रमजीवी ग्रामीण को चौबीस सौ कैलोरी की जरूरत है तो बुद्धिजीवी शहरी को इक्कीस सौ कैलोरी। सम्पन्न व्यक्ति को तो इक्कीस सौ से भी बहुत कम कैलोरी की जरूरत है। लोगों का औसत श्रम से बुद्धि और बुद्धि से धन की तरफ सरक रहा है। साथ ही ग्रामीण आबादी घटकर शहरों की ओर जा रही है तो प्रत्येक दशक में कैलोरी की आवश्यकता का औसत घटना स्वाभाविक ही है। इस सच्चाई को पलट कर कैलोरी की आवश्यकता का उपलब्धता बताने की चालाकी न पटनायक जी के लिये उचित है न सुनिल जी के लिये। मैं ऐसे कई लोगों को जानता हूँ जिन्हें कैलोरी चाहिये सोलह और बहुत प्रयत्न के बाद भी मिल जाती है बीस। चार कैलोरी उन्हें किसी तरह घूमकर या व्यायाम करके घटानी पड़ती है। ऐसे लागों की संख्या लगातार बढ़ रही है दूसरी ओर ऐसे लोग कैलोरी के औसत निकालने में भी शामिल हैं। पहले हमारा मजदूर आम तौर पर सौ किलो वजन ढोता था। बाद में यह अस्सी किलो हुआ। अब पचास किलो हुआ। स्वाभाविक है कि उसकी कैलोरी की आवश्यकता घटेगी।

आपने विश्व बैंक, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष, उदारीकरण, निजीकरण आदि शब्दों की आलोचना करते हुए आप उन्नीस सौ इक्यान्नबे के पूर्व और पश्चात् की तुलना पर आ ही गये जो आपका असली उद्देश्य था। दोनों की तुलना करने के दो अलग–अलग मापदण्ड हैं। यदि हम भौतिक प्रगति का आंकलन करें तो इक्यान्नबे के बाद भौतिक प्रगति की गति बहुत तेज हुई है। विकास दर कम होने के बाद भी इक्यान्नबे पूर्व से अपेक्षाकृत अधिक ही है। श्रम मूल्य वृद्धि का वार्षिक औसत इक्यान्नबे के पूर्व की अपेक्षा इक्यान्नबे के बाद ढाई गुना ज्यादा है। इक्यान्नबे के पूर्व विदेशो से कर्ज ज्यादा लेकर कुछ सुविधाओं पर खर्च हो रहा था। आप भी जानते हैं कि इक्यान्नबे के आस पास भारत अपने कर्ज की किश्त न देने के कारण दिवालिया घोषित होने का खतरा उठा रहा था। अब वैसी हालत नहीं। सभी वस्तुएँ बाजार में बड़ी मात्रा में उपलब्ध भी हैं और कय–शक्ति बढ़ने से बिक भी रही हैं। कुल मिलाकर भौतिक प्रगति की गति तीव्र है। हम कह सकते हैं कि इक्यान्नबे पूर्व की अपेक्षा हालत अच्छी है। दूसरी ओर यदि हम नैतिक उन्नति की चर्चा करें तो बहुत ज्यादा पतन हुआ है। चरित्र गिरा है। नैतिक स्तर भी गिरा है। भ्रष्टाचार बढ़ा है। गरीब–अमीर के बीच खाई चौड़ी हुई है। नैतिक स्तर पर इक्यान्नबे के बाद हम पीछे गये हैं। किन्तु चरित्र–पतन का कारण इक्यान्नबे पूर्व की सरकारी करण करने की नीतियॉ थीं जिनके दुष्परिणाम अब दिख रहे हैं। सरकारी करण के माध्यम से परजीवी सुखी होते हैं और स्व जीवी दुखी। निजीकरण में परजीवी दुखी होते हैं क्योंकि सत्ता के चाटुकारों की भूमिका घट जाती है। यही कारण है कि हर परजीवी इक्यान्नबे पूर्व की अर्थ–व्यवस्था को याद कर–कर के आज वह लकीर पीट रहा है। अब ऐसे परजीवियों को समझना चाहिये कि वे चाहे लाख लेख लिखें, किन्तु अब सरकारी करण–समाजवाद–केन्द्रीयकरण के दिन आने वाले नहीं। आप बीस रूपया प्रतिदिन से भी नीचे वालों को प्राप्त होने वाली सुविधाओं में स्वयं को भी शामिल करने की जो कोशिश कर रहे हैं वह अमानवीय है, अत्याचार है। मुझे मालूम है कि सरकार भी आप लोगों के दबाव में कुछ समझौता करके गरीबी–रेखा का विस्तार कर देगी, किन्तु वास्तव का गरीब कभी आपको माफ नहीं करेगा।

आपने सस्ता राशन, सस्ता पेयजल, मुफ्त शिक्षा, मुफ्त स्वास्थ्य की बात कहकर एक नई बहस छोड़ दी है। पहले भोजन या पहले शिक्षा? भोजन और पानी सस्ता और शिक्षा स्वास्थ्य मुफ्त। आप फिर से विचार करें। यदि शिक्षा मुफ्त हुई और परिवार का एक सदस्य पंद्रह वर्ष तक निःशुल्क शिक्षा पाता रहा तो शेष चार बूढ़े मॉ–बाप या छोटे

बच्चों का क्या होगा? यदि भोजन निःशुल्क हुआ तो शिक्षा सशुल्क संभव है, किन्तु शिक्षा निःशुल्क करके भोजन सशुल्क करना कितना उचित होगा? मेरा तो यह मानना है कि यदि श्रम की मांग स्वाभाविक रूप से बढ़ने दी जाय तो श्रम का मूल्य स्वतः बढ़ जायेगा और बेरोजगारी अपने आप खतम हो जायेगी। परिणाम स्वरूप न मुफ्त शिक्षा न मुफ्त स्वास्थ। मुझे आश्चर्य होता है कि आप जैसे विद्वान न श्रम की माँग बढ़ने के विषय में सोचते हैं न रोटी–कपड़ा–मकान–दवा पर लगने वाले भारी टैक्स के बारे में और न ही गरीब ग्रामीण श्रमजीवी के उत्पादन उपयोग की वस्तुओं पर भारी कर लगाकर शिक्षा का बजट बढ़ाने की मांग पर। आप तो सिर्फ एक ही रट लगाये रहते हैं कि शिक्षा पर ज्यादा खर्च करो भले ही उसके लिये कोई भी अत्याचार क्यों न करना पड़े।

आपने गरीबी–रेखा को समाप्त करके अमीरी–रेखा खींचने का सुझाव देकर और गलती की है। ऐसा लगता है कि आप यह सुझाव देकर अपनी व्यक्तिगत स्थिति को सुरक्षित करना चाहते हैं। समानता की एक ही परिभाषा है कि किसी स्थापित व्यवस्था द्वारा घोषित सीमा–रेखा से उपर वालों को समान स्वतंत्रता और नीचे वालों को समान सुविधा। मैं यह नहीं समझा कि सुविधा लेने वालों की संख्या सीमित की जाय या बाहर वालों की। रेखा से नीचे वालों की संख्या जितनी अधिक होगी उनकी सुविधा की मात्रा उतनी ही कम होती जायेगी। मेरे विचार में ऐसी रेखा के प्रस्ताव के पीछे आपका व्यक्तिगत स्वार्थ से ज्यादा कुछ नहीं।

आप वास्तव में न्याय की बात करते तो ऐसी अमीरी रेखा की बात करते ही नहीं। ऐसी अमीरी रेखा बनाने की बात तो सिर्फ वही करते हैं जिनका उद्देश्य गरीब और अमीर के बीच वर्ग–विद्वेष फैलाकर स्वयं बिचौलिये के रूप में लाभ उठाना हो। सरकार किसी भी रूप में उत्पादक इकाई न होकर व्यवस्थापक इकाई होती है। वह न तो कोई खदान है न कोई कुआं जिसमें से आने का दायित्व हमारा नहीं। इसमें तो पैसा इकट्ठा भी सरकार को करना है और बॉटना भी सरकार को है। जब सरकार का वर्तमान खर्च ही इतना है कि सरकार गरीबी–रेखा से भी नीचे वालों के उत्पादन और उपयोग की वस्तुओं पर कर लगाने को मजबूर है तो, सरकार की पहली प्राथमिकता यह होगी कि सरकार गरीबी रेखा से नीचे वालों से किसी प्रकार की कर वसूली बन्द कर दे। यदि ऐसे कर बन्द करने से उन्हें दी जाने वाली सुविधाएँ बन्द करनी पड़ें तो कर दे, किन्तु उन्हें कर मुक्त तो करे ही। यदि आवश्यक हो तो शिक्षा स्वास्थ्य के भी बजट में कटौती कर दे किन्तु गरीबी रेखा से नीचे वालों को सिद्धान्त रूप में कर मुक्त अवश्य करें। उसके बाद वह आय के कुछ ऐसे स्त्रोत खोजे जो गरीबी रेखा से उपर वालों को ही प्रभावित करती हो। उसके बाद गरीबी रेखा से नीचे वालों को छूट दे। उसके बाद शिक्षा स्वास्थ्य पर खर्च शुरू करें। मैं यह बात गंभीरता से इसलिये कह रहा हूँ क्योंकि मैंने सर्वे किया है और पाया है कि सरकार गरीबी–रेखा से नीचे वालों से जितना टैक्स वसूल करती है उससे बहुत कम ही गरीबी–रेखा से नीचे वालों पर खर्च करती है। खर्च तो सुनिल जी सलीखे लोगों को दिखता है किन्तु गरीबों से वसूली किसी को न कभी दिखती है न उसकी चर्चा होती है। यही कारण है कि गरीबी रेखा से नीचे वाले गरीबों को प्राप्त होने वाली सुविधाओं में हिस्सा बंटाने के लिये ये लोग अमीरी रेखा सरीखी मांग उठाते रहते हैं। सिद्धांत रूप से सरकार तय करे कि किसी भी रूप में घाटे का बजट नहीं बनेगा चाहे कुछ भी हो। पहले उत्पादन बढ़ेगा तब बंटवारे की चर्चा होगी। पहले कई तरह की मांग उठाकर खर्च बढ़वाना और बाद में वसूली में गरीबों को भी हिस्सेदार बनाना बिल्कुल गलत है। यदि सुनिल जी या यदि कोई और गरीबी रेखा से नीचे वालों से टैक्स वसूली तथा उन पर होने वाला खर्च का विस्तृत विवरण चाहें तो मैं उन्हें बता सकता हूँ। ये चाहें तो सार्वजनिक बहस भी आयोजित कर सकते हैं। मैं पूरी तरह कहीं भी आने के लिये तैयार हूँ।

उत्तरार्ध

सूचना

सितम्बर माह मे पंद्रह से तेइस तारीख तक अर्थात भादो अमावस्या से अष्टमी तक के नौ दिनो मे रामानुजगंज मे ज्ञान यज्ञ आयोजित है । यज्ञ बहुउद्देश्यीय होगा। ज्ञान तत्व के पिछले अंक मे दी गई तारीख मे थोडा संशोधन हुआ है।

प्रतिदिन प्रातः काल यज्ञ होगा। यज्ञ का संचालन दिल्ली के प्रसिद्ध आर्य विचारक ब्रम्हचारी राजसिंह जी करेंगे। साथ ही प्रतिदिन राजसिंह जी की वेद कथा भी होगी। वेद कथा के बाद प्रतिदिन मौलिक चिन्तक बजरंग मुनि जी की ज्ञान कथा समपन्न होगी। सायंकाल विजय कौशल जी महाराज की रामकथा होगी। ब्रम्हचारी राजसिंह जी की कथा का सार धर्म और समाज पर केन्द्रित हागा, बजरंग मुनि जी का राज्य और समाज पर तथा विजय कौशल जी का परिवार और समाज पर । इस प्रकार आप प्रतिदिन एक ही स्थान पर विचारो की त्रिवेणी के संगम पर स्नान का लाभ उठा सकेंगे। ऐसे वैचारिक संगम का यह अभूतपूर्व अवसर होगा । बाइस तारीख को लोक संसद के प्रस्ताव पर चर्चा होगी तथा कुछ निष्कर्ष निकाले जायेंगे। तेइस तारीख को समापन सत्र होगा। इसमे आम सभा रखकर निष्कर्ष समाज के समक्ष रखे जायगें।

इस नौ दिवसीय यज्ञ का विशेष लाभ होगा कि आप प्रतिदिन एक सौ तीस गांवो को घूम घूम कर देख सकेंगे। आपको पता है कि अविनाश भाई तथा राकेश शुक्ल जी के नेतृत्व मे रामानुजगंज के आस पास के एक सौ तीस

गांवो मे ग्राम सभा सशक्तिकरण को आधार बनाकर नई समाज रचना का कार्य चल रहा है। इन गांवो को आप घूम कर देख सकेंगे। आठवे दिन ग्राम सभा सशक्तिकरण विषय पर भी एक विशष चर्चा होगी।
इक्कीस सितम्बर शुक्रवार को ज्ञान क्रान्ति परिवार ट्रस्ट की बैठक होगी जिसमे रामानुजगंज मे एक 'ज्ञान केन्द्र ' बनाने की योजना बनेगी।
नौ दिनों के इस आयोजन के साथ साथ मुनि जी आपको मानसिक व्यायाम की विधि भी बताते ही रहेगे। इस तरह इस नौ दिवसीय आयोजन मे आप धार्मिक, राजनैतिक, सामाजिक, मानसिक समस्याओ का मिला जुला समाधान निकाल सकेंगे।
आप अधिक से अधिक साथियो के साथ इस यज्ञ मे आमंत्रित है। आपसे निवेदन है कि परिवार सहित आइये । अन्य विद्वानो को भी आमंत्रित करिये।
रामानुजगंज की भोगौलिक स्थिति

(1) रामानुजगंज ! कार्यक्रम स्थल सत्यनारायण धर्मशाला
(2) गढवा रोड स्टेशन जक्शन । एक से दूरी 60 कि0मी । दिल्ली से गढवा रोड ट्रेन गरीब रथ, राजधानी एक्सप्रेस जम्मूतवी टाटा नगर एक्सप्रेस स्वर्ण जयंती एक्सप्रेस। रामानुजगंज आने के तत्काल पर्याप्त साधन
(3)डाल्टन गंज । रामानुजगंज से 80 कि0 मी0 स्टेशन
(4) वाराणसी। रामानुजगंज से ढाई सौ कि0 मी0
(5) अम्बिकापुर स्टेशन रामानुजगंज से एक सौ दस कि0 मी0 । ज्ञान क्रान्ति परिवार का केन्द्रीय कार्यालय बनारस चौक से सटा हुआ। दिल्ली से अनूपपुर शहडोल होते हुए ट्रेन रूट। दुर्ग रायपुर बिलासपुर से भी ट्रेन रूट।
अन्य जानकरी आप पत्र द्वारा या फोन द्वारा ले सकते है। फोन न0–09617079344 है।

निवेदक
अभ्युदय द्विवेदी
महासचिव

विशेष निवेदन

ज्ञान तत्व के पाठको की संख्या बढाने मे आपका सहयोग चाहिये । आप कुछ नाम और भेजिये जिससे हम उन्हे भेजना शुरू कर सकें। शुल्क की समस्या नही है क्योकि अधिकांश पाठक स्वेच्छा से शुल्क दे ही देते है। कुछ देने की स्थिति मे न भी होतो अन्य दानदाता पूरा कर देते है । आप तो कुछ गंभीर पाठको के नाम भेजने का प्रयास करें।